International Journal of Applied Research 2015; 1(11): 613-614

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(11): 613-614
www.allresearchjournal.com
Received: 15-08-2015
Accepted: 18-09-2015

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हिप

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय ढलियारा कांगडा हिपइ

स्वातंत्र्योपरान्त हिन्दी नाटक और मोहनराकेश

डॉ. शिवदत्त शर्मा

नाटक लिखने की परम्परा में मोहन राकेश का वही स्थान है जैसा प्रेम चन्द का उपन्यास साहित्य में है। रचनाकार अपनी अद्भुत रचना से अमर हो जाते हैं।स्वतंत्रता के उपरान्त नाटक लेखन सही अर्थो में अभिव्यक्ति की सशक्त विधा के रूप मे उंभर कर सामने आया है।इससे पूर्व मनोरंजन की दृष्टि से यह विधा लोकप्रिय थी परन्तु आजादी के बाद नाटक जन साधारण की समस्याओं को उजागर करने वाली सबसे सटीक विधा के रूप में साहित्य में अग्रगण्य है।[1]

स्वतन्त्रता के उपरान्त हिन्दी नाट्य–सृजन में मोहंन राकेश का स्थान उल्लेखनीय है। उन्होंने भारतेन्दु और प्रसाद की परम्परा से हट कर हिन्दी नाटक को अंन्धेरे बन्द कमरों से निकाल कर युग के नए संदर्भ और संवेदनाओं से जोड कर नाटक को एक नई जमीन पर स्थापित करने का भागीरथ प्रयास किया।

हिन्दी नाटक की विश्व जनीन चेतना की ओर मोडने वाले लेखकों में अनेक नाम हैं परन्तु यहां केवल अत्यन्त महत्वपूर्ण लेखकों का ही उल्लेख वांछित है, जिन्होंने हिन्दी नाटकों को एक नई पहचान दी। ऐसे नाटक कारों में आजादी के बाद श्री लक्ष्मी नारायण मिश्र ,जगदीश चन्द्र माथुर ,उपेन्द्रनाथ अश्क ,लक्ष्मी नारायण लाल आदि नाटक कारों के नाम अग्रगण्य हैं जिन्होंने नाटक को न केवल लोक प्रिय बनाया अपितु उसे विश्व–स्तरीय नाटकों की श्रेणी में ला खडा किया।

मोहन राकेश अद्भुतनाटक कार थे ,उन्होंने विश्व के समकालीन नाट्यलेखन के समानान्तर ऐसी नाट्य सर्जना की जो आधुनिक भाव–बोध के नए आयाम प्रस्तुत करती है। नाट्य लेखन एवं मंचीय स्तरदोनों ही क्षेत्रों में राकेश ने अपने नए प्रतिमान स्थापित किए तथा हिन्दी नाटक परम्परा की रूढियों से नाटक को मुक्त कर वर्तमान की वास्तविकताओं से गहरा साक्षात्कार किया।[2]

स्वतन्त्रता के बाद भीतरी और बाहरी परिवर्तनों ने भारतीय जनचेतना को झकझोर कर रख दिया। राजनीति की दिशाहीन गति ने समस्त परिवेश में हलचल पैदा कर दीं सामाजिक क्षेत्र में प्राचीनआदर्शों और जीवन– मूल्यों के टूटने और नए मूल्यों को पूर्णतः अंगीकृत न कर पाने की असमर्थता ने नई पीढी को मानसिक कुण्ठाओं का शिकार बना दिया। आर्थिक विषमता ने नारी को नौकरी के लिए विवश कर पारिवारिक सम्बन्धों में तनाव और विचित्र मानसिक यन्त्रणा पूर्ण स्थिति को जन्म दियां । धार्मिक विश्वास और आस्थाएं व्यक्ति के नैतिक अपराधों को आवृत्त करने वाला आवरण मात्र रह गईं। इस विषैले व धुरी हीन परिवेश में जीने वाला मनुष्य आज प्रायः समझौता वादी दृष्टिकोण अपना कर जीवन को घसीटता चला जा रहा है। युगकी चेतना के इस उन्मेष ने प्रत्येक क्षेत्र के लेखक को प्रभावित किया है और कथ्य की प्रामाणिकता एवं यथार्थ में अन्तर्निहित सत्य को उद्घाटित करने का निर्मम आग्रह करने वाले नाटक विशिष्ट भाषा की सीमावधि को लांघ कर राष्ट्रीयस्तर पर छा गए। आजादी के बाद हिन्दी नाटकों के क्षेत्र में लक्ष्मीनारायण मिश्र प्रसिद्ध हुए।

मिश्र जी ने ऐतिहासिक नाटकों की रचना भी की है और पौराणिक नाटकों की भी रचना की है। गरुड ध्वज ,और नारद की वीणा आदि प्रसिद्ध नाटक हैं।

उपेन्द्र नाथ अश्क मिश्र के बाद नाटक लिखने वाले अग्रगण्य नाटककार हैं।अश्क जी ने सामाजिक ऐतिहासिक नाटकों की रचना की है।इनके नाटक पूरी तरह से रंगमंच की दृष्टि से अत्यन्त उपयुक्त हैं।[3] हिन्दी में सर्वाधिक नाटक सेठ गोबिन्द दास ने लिखे हैं। उनके नाटक और एकांकियों की संख्या लगभग 100 के आसपास है। इस अवधि में प्रसिद्ध नाटकों की एक श्रृंखला सी है। मोहन राकेश के आषाढ का एक दिन ,लहरों के राजहंस और आधे–अधूरे उन प्रसिद्ध नाटकों में से हैं जिनका उल्लेख हिन्दी साहित्य में बडे सम्मान के साथ किया जाता हैं। जगदीश चन्द्र माथुर के कोणार्क ,शारदीया ,और पहला राजा भी प्रसिद्ध नाटकों की श्रेंणी में आते हैं। इसी तरह लक्ष्मी कान्त वर्मा का आदमी का जहर और सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों में आठवांसर्ग प्रमुख हैं। डॉ लक्ष्मी नारायण लाल तो नाटक के क्षेत्र में आज प्रमुख नाटककारों की श्रेणी में आते हैं।

हिन्दी के समसामयिक नाटकों के विकास की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उनका विकास रंगमंचीय दृष्टि से हुआ है। समकालीन नाटककारों ने जहां एक ओर अपने नाटकों में समसामायिक जीवन और परिवेश प्रस्तुत किया है, वहीं नाटक में रंगमंचीय समस्याओं का विकास भी किया है। प्रायःसभी ने रंगमंच को ध्यान में रखकर ही अपने नाटकों की सृष्टि की है। कहने का तात्पर्य यही है कि प्रसाद के नाट्यसाहित्य में कल्पना की रंगीनी, आदर्श की छाया और प्रेम का मनोरम किन्तु आदर्श रूप था। प्रेम सौन्दर्य और कल्पना की जगह समसामयिक नाटकों में यथार्थ ने ले ली है और आदर्श का चौखटा टूट गया है।

हिन्दी नाटक साहित्य न केवल अपनी विकास यात्रा में वैविध्यपूर्ण रहा है अपितु विकास के विभिन्न चरणों में प्रयोग से प्रगति और नवलेखन तक फैलता गया है। यही कारण है कि हिन्दी नाटक की विकास यात्रा के केन्द्र में प्रसाद स्थित हैं। नाटक साहित्य में डॉ लक्ष्मीनारायण लाल ,सुरेन्द्र अग्नि होत्री ,रमेश बख्शी ,विपिन अग्रवाल ,और लक्ष्मी कांत वर्मा आदि प्रयोग शील नाटककारों के द्वारा हिन्दी नाटक साहित्य के विकासमें महत्व पूर्ण योगदान दिया गया है।

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी नाटकों में मोहन राकेश का महत्व पूर्ण स्थान है।हिन्दी नाटक के छठे दशक में मोहन राकेश आषाढ

का एक दिन के साथ नाटक क्षेत्र में अवतरित हुए। उनका दूसरा नाटक लहरों के राजहंस और तृतीय आधे–अधूरे नाम से प्रकाशित हुआ है। इन तीनो ंही नाटकों में मोहन राकेश ने यथार्थ परिवेश को प्रस्तुत किया है। आषाढ का एक दिन नाटक में उन्होंने कलाकार की सृजनात्मक प्रतिभा की समस्या को लेकर अपने विचारों को प्रस्तुत किया है।वास्तव में आषाढ का एक दिन, लहरों के राजहंस और आधे–अधूरे तीनों नाटक जीवन के तीन महत्वपूर्ण बिन्दुओ ंकी ओर संकेत करते हैं। ये तीन परिस्थितिया। प्रेम ,विरक्ति ,और अधूरापन हैं। मोहन राकेश ने इन तीनों नाटकों को लिख कर जो ख्याति अर्जित की है वह अन्यतम है।[4]

रंगमंचीय क्षेत्र की इसी पृष्ठभूमि ने छठे दशक में हिन्दी नाटक के रचनात्मक धरातल को प्रोत्साहन दिया और जगदीश चन्द्र माथुर ,धर्मवीर भारती ,मोहन राकेश ,लक्ष्मीनारायण लाल तथा ज्ञानदेवी अग्निहोत्री जैसे नाम उभर कर सामने आए जिन्होंने न केवल अच्छे नाटक लिखे अपितु अन्तरराष्ट्रीय स्तर के नाटक लिख कर रंगमंच के अनुकूल नाटक लिखने की परम्परा का भी सूत्रपात कर दिया।

हिन्दी नाटक को युगीन चेतना से जोडने ,सामान्य व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व और संघर्ष को स्वर देने ,नाटकीय प्रसंगों को उभारने के अनुकूल भाषा और रंग–तत्वों से स्मृद्ध करने की दृष्टि से माथुर , धर्मवीर भारती , और मोहन राकेश ही सक्षम नाटककार के रूप में उल्लेखनीय हैं उनके नाटकों, कोणार्क ,अन्धा युग ,और आषाढ का एक दिन ,ने कथ्य और शिल्प के स्तर पर हिन्दी नाटक साहित्य में मील स्तम्भ स्थापित किए।

सर्व प्रथम देन जो इन तीन नाटकारों की है, वह है हिन्दी रंगमंच पर नाटक की अन्योन्याश्रित स्थिति पर बल देने की है। पहली बार रंग तत्वों से पूर्ण और रंगमंचीय अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए नाटककारों ने नाट्यरचना की है। नाटक में युगीन स्वाभाविक और नाटकीय प्रसंगों को उभारने में सक्षम भाषा से जोडने में भी माथुर , भारती ,और राकेश के नाटक उल्लेखनीय भूमिका निभाते हैं।

हिन्दी नाटक को युगीन जीवन से जोडने रंगमंचीय सम्भावनाओं और नाटकीय भाषा की खोज में जिस कर्मठता ,लग्न ,और परिश्रम का परिचय राकेश ने दिया वह किसी अन्य नाटककार में दिखाई नहीं देता । अपने प्रारम्भिक नाटकों में परम्परा के निर्वाह से प्रारम्भ हो कर वे मौलिक प्रयोगों द्वारा युग से प्रत्यक्ष साक्षात्कार की ओर मुड गए । आषाढ का एक दिन से छतरियां तक की बृहद् यात्रा निरन्तर परिष्कृत होती नाट्य सर्जना यथार्थ की बाहरी पकड और शोधपरक दृष्टि कोण की परिचायक है। अपने अन्तिम दिनों में वे नेहरु फेलोशिप के अन्तर्गत नाटकीय शब्द की भूमिका और प्रभाव पर शोध करने में संलग्न थें। उनके नाटको ने हिन्दी नाटक और ग्रगमंच के क्षेत्र में जो पुनरान्वेषण का वातावरण उत्पन्न किया उस के प्रारम्भ की दृष्टि से उनकी भूमिका विशिष्ट है।[5]

मोहन राकेश का नाट्य साहित्य में स्थान–

हिन्दी नाटक साहित्य में मोहन राकेश का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण और विशिष्ट है। उन्होने अपने तीनों नाटको के माध्यम से न केवल प्रयोग किए हैं अपितु अतीत की ऐतिहासिकता को आधुनिक संदर्भ में प्रस्तावित भी किया हैं इतना ही नहीं नाटक और ग्रगमंच का जो सम्बन्ध प्रसाद युग में जो कुछ कम हुआ था ,उसे पुनः स्थापित करके नाटक के क्षेत्र में उललेखनीय कार्य भी किया है।[6]

मोहन राकेश ने अपने नाटकों में कथावस्तु ,चरित्र ,सम्वाद ,और शिल्प के नवीनतम प्रयोगों द्वारा यह भी सिद्ध कर दिया है कि नाटक की भाषा और उसके कथ्य एक दूसरे से गहरे जुडकर ही सफलता के सोपानों तक जा सकते हैं। ऐसी स्थिति में हम मोहन राकेश को नाटकों में मानवीयता और यथार्थ के प्रति आस्था का स्वर मुखरित करने वाले नाटककार के रूप में स्वीकार कर सकते हैं।

मोहन राकेश के नाटकों में किसी प्रकार के दर्शन का जिसे अस्तित्व वाद कहा जाता है ,प्रभाव खोजना या मानना अनुचित होगा। उन्होंने स्वतंत्रता के उपरान्त भारत की आर्थिक सामाजिक विषमताओं से बदलते मानवीय सम्बन्धों और टूटते जीवन मूल्यों से व्यक्ति के जीवन में आने वाले द्वंद्व ,संघर्ष,और मानसिक विघटन को अपने नाटकों में मूर्त किया ।उनके नाटकों में मिलने वाली हताशा, पात्रों तथा मानवीय सम्बन्धों की हास्यास्पद स्थिति वस्तुतः सामयिक युग का यथार्थ है जो हमारे पूर्व परिवेश में व्याप्त है।मोहन राकेश के नाटकों के कथ्य में विसंगत परिस्थितियों में घुटते मानव का तनाव मुख्य रूप से उभर कर सामने आया हे।[7]

उनके नाटक स्त्री–

पुरुष के सम्बन्धों की विवशता के मानों विविध अनुभवों के आलेख है किन्तु मुख्य कलेवर के माध्यम से प्रकट होने वाला समकालीन समस्याओं का संस्पर्श इन नाटकों की महत्ता को और बढा जाता हे। अतः कहा जा सकता है कि मोहन राकेश ने हिन्दी नाटक को प्रयोगात्मक प्रगति प्रदान की और रंगमंच से जोड कर नाटक की भाषा का विकास करते हुए समसामयिक जीवन के विविध सन्दर्भो को प्रस्तुत कर उल्लेखनीय योगदान दिया। मोहन राकेश ने नाटकों के माध्यम से भारतीय जनचेतना को भीतरी एवं बाहरी परिवर्तनों से पूरी तरह झकझोर कर रख दियां।

सन्दर्भ सूचि–

1. डॉ पद्म सिंह हिन्दी गद्य विधाएं और विकास पृ 56
2. खत्री एस पी आलोचनाः इतिहास तथा सिद्धान्त पृ 96
3. डॉ गणपति चन्द्र गुप्त आधुनिक हिन्दी साहित्य पृ 112
4. सुरेशचन्द व खण्डेलवाल हिन्दी आलोचना के आधार स्तम्भ पृ 75
5. वाजपेयी, नन्द दुलारे आधुनिक साहित्य पृ 65
6. इनद्रनाथ मदान आलोचना और साहित्य पृ 43
7. डॉ राम कुमारहिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास